ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 141-145**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

सती विरोधी आंदोलन 1987–1988

डॉ0 लक्ष्मी कुमारी
सहायक प्राध्यापिका– इतिहास विभाग, जे0 डी0 वीमेन्स कॉलेज, पटना (बिहार) भारत

Received-12.04.2026, Revised-20.04.2026, Accepted-27.05.2026, E-mail:aaryvart2013@gmail.com

सारांशः सितंबर, 1987 में राजस्थान के एक गाँव में हुई सती की एक घटना से इस आंदोलन की शुरुआत हुई। इस आंदोलन के दौरान बड़ी गर्मागर्म बहस हुई। इस बहस में न केवल हिंदू स्त्रियों के प्रति होने वाले अच्छे–बुरे बर्ताव के मुद्दे उठाए गए बल्कि धार्मिक पहचान, सामुदायिक स्वायत्तता तथा भारत के बहुआयामी, विविध समाज में कानून एवं राज्य की भूमिका के प्रश्न भी उठे। बहस में दी गई अनेक दलीलें नई नहीं थीं। भारत में सामाजिक परिवर्तन (नारीवादी आंदोलन की वर्तमान स्थिति सहित) के जटिल इंद्रजाल में क्या–क्या रहस्य छिपे हुए हैं, यह चर्चा के स्वरूप से स्पष्ट था।

चर्चा के दौरान ग्रामीण तथा शहरी, परंपरा एवं आधुनिकता, अभिनंदनीयता तथा समरूपता, राज्य एवं धार्मिक समुदायों, अध्यात्मवाद एवं यथार्थवाद वगैरह के मध्य दोहरे विरोध की दुहाई दी गई। इस विरोध की दुहाई का (सती के समर्थन एवं विरोध में) अलग–अलग प्रभाव पड़ा क्योंकि दोनों पक्षों के विरोध का सजातीय कारण था। पहले पक्ष को जहाँ ग्रामीण, पारंपरिक समुदायों का प्रतिनिधि माना गया तथा जो स्वयं को भारतीय राष्ट्र–राज्य की समाजीकरण की नीतियों से स्वयं को बचाने के लिए संघर्षरत था, वहीं दूसरे पक्ष को समाज के संभ्रांत, शहरी तथा आधुनिक वर्ग का प्रतिनिधि माना गया। यह पक्ष राज्य पर ऐसे समुदायों, जिनका कि सती प्रथा से कोई संबंध नहीं था, में हस्तक्षेप के लिए दबाव डाल रहा था। इस प्रकार वह नागरिक समुदाय पर अपना नियंत्रण बढ़ाने के लिए राष्ट्र–राज्य को समर्थन–प्रोत्साहन दे रहा था।

कुंजीभूत शब्द– सती विरोधी आंदोलन, सामुदायिक स्वायत्तता, बहुआयामी, कानून, परंपरा, आधुनिकता, अभिनंदनीयता, समरूपता, राज्य।

सती की घटना के कुछ सप्ताहों के भीतर, सती–विरोधी अभियान के प्रारंभहोते ही इन दलीलों को अग्रसारित करना शुरू कर दिया गया। हालाँकि इन तर्कों को 1986–87 में मुस्लिम महिला विधेयक के समर्थकों द्वारा पहले भी इस्तेमाल किया जा चुका था, परंतु सती के मामले में हुई बहस के दौरान ये दलीलें जिस रूप में सामने आई उससे इस बात का पता चलता है कि दलील कितनी शक्तिशाली होकर उभरी। उदाहरणार्थ, पूर्ववर्ती आंदोलन में यह दलील विधेयक–समर्थकों द्वारा अग्रसारित की गई परंतु सती आंदोलन में यह सती समर्थक तथा 'बाहरी' (अखबारों में छपे लेखों की श्रृंखला के रूप में) दोनों समूहों द्वारा आगे बढ़ाई गई। ये दलीलें सबसे पहले दिल्ली के हिंदी–अँग्रेजी भाषा के राष्ट्रीय दैनिक अखबारों जैसे जनसत्ता (जनवरी, 29.9.87), इंडियन एक्सप्रेस (आशीष नंदी, 5.10. 87) तथा स्टेट्समेन (पैट्रिक डी. हैरीगन 5.11.87) द्वारा दी गई। इन तीनों लेखकों ने अपने–अपने लेखों के माध्यम से इन दलीलों को एक प्रकार से बाहरी आधार प्रदान किया इसलिए उन शहरी, आधुनिक तथा समाज के संभ्रांत वर्गों द्वारा भी इनकी वकालत की जाने लगी जिन्होंने पहले इस पर हमला किया था।

बनवारी, आशीष नंदी तथा पैट्रिक हैरीगन ने अपने–अपने लेखों में भारतीय नारीवादी आंदोलन की आलोचना करते हुए जो दलीलें पेश कीं, शायद उनका सर्वाधिक चौंकानेवाला बिंदु यह था कि उन्होंने भारती नारीवादियों को आधुनिकता का एजेंट होने का आरोप लगाया। लेखकत्रय के अनुसार, नारीवादी एक ऐसे समाज पर बाजार–प्रभावित समानता और आजादी का दृष्टिकोण थोपने की कोशिश कर रहे थे जिसने आत्म–बलिदान का सर्वोत्तम उदाहरण पेश किया तथा जिसके कारण उन्हें समाज में आदर मिला, परंतु आज उनकी गरिमा एवं गौरवशाली छवि को निहित स्वार्थी बाजारी शक्तियों द्वारा क्षति पहुँचाई जा रही है। इसके अलावा इन तीनों ने समानता एवं आजादी के कृशकाय बाजार–प्रभावित दृष्टिकोण पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव की उपज के रूप में परिभाषित किया इसलिए भारतीय नारीवादियों पर पश्चिमपरस्त, उपनिवेशवादी, सांस्कृतिक साम्राज्यवादी तथा परोक्ष में पूँजीवादी विचारधारा का पोषक होने का आरोप लगाया।

हालाँकि भारतीय नारीवादियों को अस्सी के दशक में भी ऐसे हमलों का शिकार होना पड़ा था, परंतु वर्तमान हमला अपनी प्रकार का सबसे बड़ा हमला था क्योंकि यह ऐसे समय में किया गया जब यह ऐसी विचारधारा को कानूनी जामा पहनाता प्रतीत हुआ जिसके अंतर्गत किसी स्त्री के अपने पति के साथ मर जाने के कृत्य को सर्वोत्तम कार्य कहकर उसकी प्रशंसा की गई जबकि सती की घटना को अधिकांशतः हत्या की घटना के रूप में देखा जाना शुरू हो गया था। ऐसे आरोपों से भारतीय नारीवादियों का क्षुब्ध होना स्वाभाविक था क्योंकि वे अपने कृत्यों से पहले ही अनेक प्रकार से यह साबित कर चुके थे कि वे साम्राज्यवाद तथा पूँजीवाद–विरोधी हैं। इनमें से अधिसंख्य नारीवादियों में इस हमले से वर्षों पूर्व ही 'पश्चिमी नारीवादी' लक्ष्यों और तौर–तरीकों की भरपूर आलोचना की थी। सबसे दुखद पहलू यह तथ्य था कि इन लेखकों में से किसी एक ने भी खुद को इस प्रश्न का उत्तरदायी नहीं माना कि देवराला में क्या हुआ तथा क्या हो रहा है, इनमें से एक ने भी यह जानने की कोशिश नहीं की कि रूपकँवर किन परिस्थितियों में जीवित रही या कि किन परिस्थितियों में वह मर गई।

ऐसी बात नहीं है कि सितंबर, 1987 में ही भारतीय नारीवादियों की सती समस्या से पहली बार मुठभेड़ हुई हो। इस समस्या से उनकी मुठभेड़ सन् 1983 में पहले भी हो चुकी थी। सन् 1983 में दिल्ली में सती प्रथा की विचारधारा को प्रचारित करने के लिए मारवाड़ियों से आर्थिक सहायता प्राप्त राणी सती सर्व संघ नामक संगठन अभियान चला रहा था। राणी सती सर्व संघ (आरएसएसएस) पहले से ही राजस्थान एवं दिल्ली में सती मंदिरों का संचालन कर रहा था। सन् 1983 में संघ ने दिल्ली में एक भव्य मंदिर के निर्माण के लिए भूमि की मंजूरी प्राप्त की। सरकार से मिली इस स्वीकृति के उपलक्ष्य में एक समारोह आयोजित किया गया जिसके अंतर्गत नवनिर्माणाधीन सती मंदिर स्थल तक जुलूस निकाला गया जिसमें बड़ी संख्या में स्त्रियों–पुरुषों ने भाग लिया। दिल्ली के नारीवादियों को जब इस योजना की भनक लगी तो उन्होंने जुलूस के रास्ते में समानांतर–प्रदर्शन करने का निर्णय किया। उनका प्रदर्शन सांकेतिक रूप से विफल रहा। नारीवादियों के विरोध प्रदर्शन की विफलता का आंशिक कारण यह रहा कि उनके पास लोगों को इस कार्यक्रम के बारे में जानकारी देने का पर्याप्त समय नहीं था जिसकी वजह से नारीवादियों की अपनी संख्या भी अपेक्षातीत नहीं रही। दूसरा कारण शायद यह था कि यह पहला मौका था जब उन्हें बड़ी विषम परिस्थितियों में स्त्रियों के इतने बड़े समूह से जूझना पड़ा। यह इतना दुरूह कार्य था कि इस प्रदर्शन की जान ही निकल गई। बहरहाल, इससे भी अधिक कष्टप्रद था जुलूसवालों का तौर–तरीका

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

जिसके तहत उन्होंने अधिकार की भाषा में कहा कि हिंदू तथा स्त्री होने के नाते उन्हें इस बात का अधिकार मिलना चाहिए कि वे सती होने के साथ–साथ उसकी पूजा तथा सती के पक्ष में प्रचार कर सकें। इसी दौरान उन्होंने स्त्रियों की शक्ति का प्रदर्शन करते हुए नारीवादी नारे लगाए जैसे– 'हम भारत की नारी हैं, फूल नहीं चिंगारी हैं।' प्रदर्शन में शामिल महिलाओं (नारीवादियों) को यह देखकर गहन दुःख हुआ कि उनके अपने शब्दों को ही उनसे छीनकर आज उन्हीं के विरुद्ध प्रयोग किया जा रहा है।[1] इस अनुभव ने दो भिन्न प्रतिक्रियाओं को जन्म दिया पहली यह कि नारीवादियों ने सती की अस्मिता, सती मंदिरों तथा भारत में सती–धर्म के प्रतिपादकों के विषय में अनुसंधान करने का संकल्प लिया; दूसरी प्रतिक्रिया थी गैर–मुठभेड़कारी रास्ते तलाश करने की जिससे सती की विचारधारा को दफनाया जा सके। बहरहाल, दोनों ही प्रतिक्रियाओं ने सती के विषय में अध्ययन, उसके विस्तार तथा सती की परंपराओं से निपटने की आवश्यकता पर बल दिया।

चाहे इन कारणों से या कि सती के समर्थन में कोई अन्य जन–अभियान न चलाए जाने से, 1987 में रूपकँवर की मृत्यु तक यह मुद्दा धुँधलाया ही रहा। ऐसा माना जाता है कि भारत में सती की हर वर्ष औसतन एक घटना जरूर होती थी, फिर क्या कारण था कि जितना उग्र रूप इस घटना ने धारण किया उतना इससे पूर्व की अन्य घटनाओं ने नहीं? केवल चार महीने पहले पाली जिले के बागड़ा गाँव में पुलिस ने बनवारी नामक महिला को सती होने से रोका और घटना का नजारा देखने आई लगभग वीस हजार लोगों की भीड़ को पुलिस ने तितर–बितर कर दिया।[2] दो वर्ष पूर्व मार्च, 1985 में पुलिस ने जयपुर जिले में सती की एक अन्य घटना को रोका तथा प्रस्तावित सती स्थल पर एकत्र लगभग तीस हजार लोगों की भीड़ को तितर–बितर करने के लिए पुलिस ने आँसू गैस के गोले छोड़े तथा लाठीचार्ज किया।[3] इनमें से किसी भी एक घटना में पुलिस के हस्तक्षेप को लेकर उसके विरुद्ध कोई आंदोलन नहीं हुआ। फिर भी, रूपकँवर की मृत्यु, जिसे किसी ने नहीं रोका, सती के समर्थन एवं विरोध के व्यापक आंदोलन का कारण बनी। ऐसा तभी हुआ जब इस मुद्दे को लेकर अभियान चलाया गया और साबित किया गया कि रूपकँवर का मामला अन्य घटनाओं से भिन्न है। सती की कोशिश किए जानेवाले अन्य क्षेत्रों के विपरीत देवराला अपेक्षाकृत अधिक विकसित गाँव था। रूपकँवर की ससुराल के लोग हालाँकि ज्यादा अमीर तो नहीं थे, फिर भी संपन्न कहे जा सकते थे। रूपकँवर के ससुर जिले के एक स्कूल में प्रधानाध्यापक थे तथा वह खुद भी स्नातक (ग्रेजुएट) थी। एक राजपूत परिवार के नाते उनका प्रभावशाली राजपूतों तथा मुख्यधारा के राज्यस्तरीय राजनीतिज्ञों से उनका संपर्क था।

रूपकँवर का विवाह उसके पति की मृत्यु से कुछ समय पूर्व ही हुआ था। उसके दहेज में अन्य वस्तुओं के अलावा तीस तोला सोना भी शामिल था। उसका पति दिमागी बीमारी से पीड़ित था तथा लगभग छह महीने तक ही वे साथ–साथ रहे। पति की मृत्यु के बाद रूपकँवर को सती 'बनाने' का निर्णय लिया गया अतः इस आशय की घोषणा अग्रिम रूप से कर दी गई क्योंकि सती एक दर्शनीय घटना है। जो साक्ष्य सामने आए वे उसकी हत्या की ओर संकेत करते थे : उसके एक पड़ोसी ने कहा कि वह भागकर घुड़साल में छिप गई परंतु उसे खींचकर बाहर निकाल लिया गया और नशे के ढेर सारे इंजेक्शन लगा दिए गए। इसके बाद उसका दुल्हन की तरह श्रृंगार करके उसे चिता पर बैठा दिया गया और लकड़ियों तथा नारियल के टुकड़ों के ढक दिया गया। चिता को अग्नि उसके नाबालिग देवर ने दी।[4]

यह पता चलने के बाद कि अखबारवाले घटनास्थल का दौरा करने के लिए आ रहे हैं, रूपकँवर को सती बनानेवाले कार्यक्रम के आयोजक सामने आ गए। प्रेसवालों के देवराला पहुँचने पर सती स्थल के स्वयंभू रक्षकों ने गालियों तथा लात–घूंसों से उनका स्वागत किया। दूसरे शब्दों में, उनकी योजनाओं से साफ पता चलता था कि वे किसी भी स्थिति से निपटने के लिए तैयार थे। यह भी हो सकता था कि उन्होंने खुद लड़ने का मन बना रखा हो; क्या सचमुच वे किसी युद्ध की उम्मीद में थे ? सरकार के रवैये को देखते हुए इस दृष्टिकोण को कुछ बल मिलता है।

प्राप्त खबरों से इस आशय का संकेत मिलता है कि स्थानीय प्रशासन को सती की योजना की जानकारी थी; फिर भी उसने घटनास्थल की ओर एक पुलिस जीप रवाना कर अपने 'कर्त्तव्य' की इतिश्री मान ली। पुलिस जीप भी थोड़ी दूर जाकर बीच रास्ते से वापस लौट आई। इस भगदड़ के बाद तीन दिन तक खामोशी रही, उसके बाद कहीं एक सरकारी प्रतिनिधि ने देवराला का दौरा किया।[5] इससे भी अधिक चौंकानेवाला सरकारी सामान्य रवैया था। ऐसा नहीं था कि सरकार किसी मुद्दे को टालने की नीयत से उसमें आलस्य और विलंब कर रही थी, बल्कि सरकार की उद्विग्न करनेवाली निष्क्रियता में दो सप्ताह से अधिक का समय बीत गया तब कहीं जाकर राज्य या केंद्र सरकार के किसी प्रवक्ता ने इस मुद्दे पर कोई बयान दिया। जबरन सती बनाने के तमाम सबूत और बढ़ते जनरोष के बावजूद किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया गया। इस बीच रूपकँवर को नशे का इंजेक्शन लगानेवाला डॉक्टर भी अदृश्य हो गया।

रूपकँवर को जिंदा जला देने के फौरन बाद घटनास्थल एक लोकप्रिय तीर्थस्थल बन गया जहाँ झुंझुनू की भाँति चढ़ावा का सामान तथा स्मृतिचिह्न (जैसे अपने पति के सिर पर हाथ रखे आग की लपटों के बीच मुस्कराती रूपकँवर की फोटो) बेचने वाली अनेक दुकानें खुल गई। भक्तिगीतों की आडियो कैसेटों की विक्री इन दुकानों पर तुरत–फुरत शुरू हो गई। उसके ससुर, गाँव के कुछ महत्त्वपूर्ण लोगों एवं सती धर्म रक्षा समिति नामक नवस्थापित संगठन के सदस्यों ने मिलकर राणी सती सर्व संघ की तर्ज पर एक न्यास (ट्रस्ट) स्थापित किया ताकि सती स्थल का रखरखाव और चंदा इकट्ठा किया जा सके। सती स्थल पर पूजा के लिए देश में उपलब्ध आधुनिक तकनीक का इस्तेमाल किया गया। वाहन खड़ा करने के लिए पार्किंग स्थल तया यातायात नियंत्रण के लिए कार्यकर्ता नियुक्त कर दिए गए। सती स्थल के पास एक कंट्रोल टॉवर बना दिया गया तथा सारे क्षेत्र में लाउडस्पीकर लगा दिए गए। कंट्रोल टॉवर से तीर्थयात्रियों तथा ट्रस्ट के सदस्यों के लिए सूचनाएँ प्रसारित की जाने लगीं। खाने–पीने की चीजों की दुकानें तथा तीर्थयात्रियों के लिए आवास उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी महाजनों ने सँभाली। यद्यपि इस बात की कोई जानकारी हासिल नहीं हो सकी कि ट्रस्ट या दुकानदारों ने कितना पैसा बनाया, लेकिन अपुष्ट सूचना के अनुसार तीन सप्ताहों के भीतर ट्रस्ट ने कोई पचास लाख रुपया इकट्ठा किया।[6] सती एक बड़ा व्यापार है। नारीवादियों तथा समाज सुधारकों की माँगों के बावजूद यह राशि जब्त नहीं की गई।

सती स्थल का उपासना केंद्र के रूप में परिवर्तित हो जाना तथा उसके आसपास संबंधित वस्तुओं की बिक्री के लिए दुकानें खुलने जैसी गतिविधियाँ सती के व्यापारिक पक्ष के लिए कोई नई, विशेषतया आधुनिक नहीं हैं, परंतु जिस पैमाने पर तीर्थस्थल की गतिविधियों का तकनीकीकरण हुआ है वह सचमुच आधुनिक है। कुमकुम संघारी ने इसे उद्धृत करते हुए लिखा है कि किस प्रकार महलों जैसे भव्य सती मंदिरों में सती की अनुकृति के रूप में स्त्री को मृत व्यक्ति के साथ चिता पर बैठा दिखाकर सती धर्म या सती

की 'पूजा' के लिए लोगों को प्रेरित कर उनका व्यवसायीकरण किया गया क्योंकि इन मंदिरों से कुछ दूरी पर अनेक ऐसे सती–स्मारक पत्थर मिल जाएँगे जो उपेक्षित हैं तथा जिनकी कोई पूजा नहीं की जाती।[7]

दूसरे शब्दों में, सती उपासक भौतिकतावाद–विरोधी समाज पर नारीवादियों द्वारा समानता के बाजार–प्रभावित सिद्धांत थोपने का आरोप लगानेवालों की इस घटना ने पोल खोल दी। देवराला की घटना ने सती उपासक समाज की ऐसी घृणित भौतिकतावादिता का रहस्योद्घाटन किया जो लाभार्जन की दृष्टि से 'बलिदान' का उत्पादन करता है।

आगे चलकर नारीवादियों को सती के विषय में अनेक नाखुशगवार जानकारियाँ मिलीं कि किस तरह स्त्रियों के मुद्दों को शक्ति प्राप्त करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। सुदेश वैद ने दर्शाया है कि किस प्रकार आजादी के बाद शेखावटी अंचल (जहाँ देवराला स्थित है) में अपने खोए हुए अधिकारों को पुनः प्राप्त करने के लिए सती या सती धर्म की 'परंपरा' गढ़ी गई। (दिलचस्प तथ्य यह है कि सन् 1947 के बाद होनेवाली सती की तीन चौथाई घटनाएँ इसी क्षेत्र में हुईं)। मूलतः छोटे रजवाड़ों और जागीरदारोंवाले इस क्षेत्र में सन् 1846 में सती को गैरकानूनी घोषित करने का समर्थन किया गया था। स्वाधीनता के पश्चात रजवाड़ों की समाप्ति तथा आगे चलकर भूमि की जमींदारी एवं जागीरदारी व्यवस्था के उन्मूलन तथा इसके साथ–साथ हुए भूमि सुधारों के परिणामस्वरूप क्षत्रियों एवं बनियों की ताकत एवं प्रभाव खत्म हो गया। पूर्व रजवाड़ों तथा बड़े जमींदारों के नवनिर्मित संगठन क्षत्रिय महासभा की ओर से सबसे पहले भूमि सुधार विरोधी संघर्ष छेड़ा गया। क्षत्रिय महासभा जब जागीरदारी व्यवस्था को बहाल कराने में सफल हो गई तो छोटे जमींदारों ने भूस्वामी संघ नामक संगठन बनाकर क्षत्रियों जैसा आंदोलन शुरू किया।

दोनों संगठनों ने वीरता की अपनी 'राजपूती' परंपरा की दुहाई दी जिसके अंतर्गत लोग हिंदू परंपरा की रक्षा करते हुए युद्ध के मैदान में दुश्मन को मार डालते थे या स्वयं मर जाते थे जबकि स्त्रियाँ घरों में इस परंपरा की रक्षा में (जौहर या सती होकर) अपनी जान दे देती थीं। राजपूती शान का बखान करने के लिए लड़ाकू नवरूढ़िवादी हिंदुओं ने केसरिया वेशभूषा में हाथ में लाठी लिए लगभग दस हजार राजपूतों का एक जुलूस निकाला।इसके साथ ही सती का सच्ची राजपूती पहचान के रूप में महिमामंडन शुरू हुआ। स्वाधीनता के पश्चात सती की पहली घटना सन् 1954 में हुई जिसके फौरन बाद झुंझुनू के प्राचीन सती स्मारक का नवनिर्माण एवं विस्तार किया गया। झुंझुनू में सालाना 'सती मेला' लगना प्रारंभ हो गया।[8]

सती के इस महिमामंडन को बनियों, खासकर मारवाड़ियों का आर्थिक एवं सामाजिक समर्थन प्राप्त था। महाजनों तथा मारवाड़ियों ने ही प्राचीन सती स्मारकों की खोज करके उनका जीर्णोद्धार कराया। इसके साथ ही उन्होंने राणी सती सर्व संघ की स्थापना की जो आजकल सारे भारत में 105 सती मंदिरों का संचालन करता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि महाजनों तथा राजपूतों के पारस्परिक हितों को सती के माध्यम से पूरा करने का नया नुस्खा मिल गया।

राजपूतों द्वारा सन् 1950 में अपनी पहचान के रूप में किए गए सती के प्रयोग और सन् 1987 की इस घटना में रोचक समानता है। रूपकँवर की अर्थी पर जयपुर में सती धर्म रक्षा समिति की स्थापना की गई जिसके कर्ताधर्ता शहरी लोग थे, जिनमें से अनेक व्यापारी तथा बुद्धिजीवी थे। समिति के सदस्यों में ऐसे अनेक बड़े भू–स्वामी भी थे, जिनका ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में खासा असर था। देवराला ट्रस्ट के साथ–साथ इस समिति ने भी घोषणा की कि रूपकँवर की मृत्यु के दसवें दिन सती स्थल पर चुनरी महोत्सव आयोजित किया जाएगा। ऐसा लगता है कि इस क्षेत्र में स्त्री की मृत्यु के पश्चात चुनरी दफनाए जाने की परंपरा रही है, परंतु इससे पहले कभी उसे 'महोत्सव' नहीं कहा गया।

जयपुर के नारीवादियों ने इस आयोजन को रोकने के लिए उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की तथा माननीय उच्च न्यायालय ने चुनरी महोत्सव को रोकने का राज्य सरकार को आदेश दिया। हालाँकि महान्यायवादी ने घोषणा की कि चुनरी महोत्सव पर रोक लगाई जाएगी, परंतु कुल मिलाकर बस इतनी कार्रवाई राज्य सरकार द्वारा की गई कि उसने वाहनों को एक निश्चित स्थान पर रोक दिया परंतु लोगों को बिना समूह बनाए एक–एक करके वहाँ जाने और जुलूस में शामिल होने की छूट दे दी। लगभग पाँच सौ पुलिसकर्मियों को सादे कपड़ों में सती स्थल के मार्ग में तैनात कर दिया गया जिससे भीड़ को किसी प्रकार का भय नहीं हुआ।[9] महोत्सव संपन्न हुआ। कुछ देर तक शोक व्यक्त करने की रस्म अदायगी के पश्चात सती स्थल पर परंपरागत वेश–भूषा में एकत्र पुरुषों ने विजय समारोह मनाया और गर्व से छाती ताने अनेक लोगों ने नारे भी लगाए। सती स्थल राजनीतिक रैली स्थल के रूप में परिवर्तित हो गया था। सती स्थल पर एकत्र लोगों ने तलवारबाजी के करतब दिखाकर रणक्षेत्र जैसा माहौल तैयार कर दिया था। इन लोगों ने समारोह के अनुकूल भक्ति गीत गाने के बजाय मुख्य धारा के राजनीतिक नारों की तर्ज पर नारे लगाए। मधु किश्वर तथा रुथ वनीता ने दर्शाया है कि तीन समूहों द्वारा ये नारे लगाए गए।

(1) नारे नेताओं के महिमामंडन के लिए बनाए नारों की तर्ज पर आधारित थेः जैसे, 'सती हो तो कैसी हो ? रूपकँवर जैसी हो' यह नारा इस तर्ज पर हैः 'देश का नेता कैसा हो ? राजीव (या क. ख.) गांधी जैसा हो।'
(2) विजयी नारे– 'एक, दो, तीन, चार, सती माता की जय–जयकार !'
(3) हिंदू संप्रदायवादी आंदोलन से अनूदित नारा जैसे 'देश धरम का नाता है, सर्त। हमारी माता है।' यह नारा 'देश धरम का नाता है, गाय हमारी माता है।' पर आधारित है।[10]

यद्यपि अनेक ऐसे कानून विद्यमान हैं जिनके अंतर्गत सती के उद्भावकों एवं लाभार्जकों को दंडित किया जा सकता था, परंतु राज्य सरकार ने कोई कार्रवाई नहीं की क्योंकि इसका एक बड़ा कारण यह था कि यह मुद्दा राजपूत समुदाय की पहचान से जुड़ा था तथा राजपूत समाज में प्रभावशाली हैं। वास्तविकता यह है कि राज्य स्तर के अनेक राजनीतिक सती स्थल के प्रति अपना सम्मान व्यक्त करने के लिए सती स्थल की ओर दौड़ पड़े। इनमें शामिल थे–जनता पार्टी के राज्य प्रमुख, राजस्थान के विधायक तथा भारतीय जनता पार्टी के नेता तथा लोकदल का एक सदस्य, राजपूत सभा के कार्यकारी अध्यक्ष एवं कॉंग्रेस के पूर्व विधायक।[11] यानी मध्य से दक्षिणपंथी सभी बड़ी राजनीतिक पार्टियों के लोग वहाँ गए, यह जानने के लिए कि वहाँ क्या हुआ, बल्कि इसलिए कि इसके माध्यम से उन्होंने राजपूती 'परंपरा' के प्रति निष्ठा प्रदर्शित की ताकि इस रास्ते से राजपूत वोटों पर भी अपना दावा जताया जा सके। इसके पीछे हिंदू वोट प्राप्त करने की भावना काम कर रही थी और दोनों के पीछे बहुसंख्यक–अल्पसंख्यक राजनीति, जाति तथा सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व का प्रश्न था।

जिस प्रक्रिया के तहत यह सब कुछ हुआ, वह चौंकानेवाली है क्योंकि यह भारत में सांप्रदायिक स्थापना पर प्रकाश डालती है तथा दिखाती है कि किस प्रकार लैंगिक मुद्दे इसके केंद्र में आ सकते हैं। नीति–निर्धारक एवं बौद्धिक स्तर पर सती समर्थकों की एक बड़ी दलील यह होती थी कि यदि राज्य लोगों (जनता) का प्रतिनिधित्व करता है तो राजपूत ऐसे लोग थे जिनके यहाँ सती एक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

विचारधारा एवं परम्परा थी इसलिए इसे मान्यता प्रदान कर संवैधानिक बनाया जाए। बुनियादी तौर पर यह दलील दी गई कि सती को संवैधानिक बनाने का अर्थ है राजपूतों को जानबूझकर अलग–थलग करने का प्रयास। उदाहरण के लिए, सती विरोधियों को इस रूप में पेश किया गया है मानो वे इसकी आड़ लेकर राजपूतों पर हमला करनेवाले हों। इस दलील की व्यापक अपील सती के विरुद्ध अभियान चलानेवाले नारीवादियों को साफ समझ आने लगी क्योंकि हम जितने भी राजपूतों से मिले, उनमें से अधिसंख्य ने सती का बचाव ही किया। उन्होंने बिना किसी अपवाद के पूछा कि सती को मुद्दा क्यों बनाया जा रहा है और बिना किसी अपवाद के उन्होंने देखा कि यह अभियान राजपूतों के विरुद्ध चलाया जा रहा है।

इन दोनों दलीलों को दो अन्य समूहों द्वारा एक कदम और आगे ले जाया गया। पहला, बनारस तथा पुरी जैसे बड़े हिंदू मंदिरों के मुख्य पुजारियों ने बयान जारी कर कहा कि सती न केवल राजपूत संस्कृति के सर्वोत्तम तत्वों का प्रतिनिधित्व करती है, बल्कि यह हिंदू की प्रतीक है तथा इसे शास्त्रीय मान्यता प्राप्त है। सती को संवैधानिक बनाए जाने की आवश्यकता को दोहराते हुए उनकी दलील का मुख्य मकसद यह जताना था कि ऐसे मुद्दे पुजारियों के अधिकार क्षेत्र में आते हैं न कि राज्य के अधिकार क्षेत्र में। इसी दौरान उन्होंने कहा कि सनी विरोधियों की वजह से 'हिंदुत्व खतरे में' है।

दूसरा समूह शिवसेना की अगुवाई वाला धुर दक्षिणपंथी हिंदू राष्ट्रवादियों का था। शिवसेना सती समर्थक आंदोलन में सक्रिय थी तथा 'हिंदुत्व खतरे में' की तर्ज पर प्रदर्शनों का आयोजन कर दलील देती कि राज्य खासतौर से हिंदुओं के प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अख्तियार कर रहा है क्योंकि वह अल्पसंख्यक समुदाय की माँगों पर अमल करने को लालायित दिखती है परंतु बहुसंख्यकों के बारे में ऐसा करने में अनिच्छुक दिखाई देती है। (यहाँ मुस्लिम महिला विधेयक को विशेष रूप से उद्धृत किया गया)।

धर्म–निरपेक्षता तथा धार्मिक प्रतिनिधित्व के मामले में भारतीय राज्य की लोकतांत्रिक परिभाषा हमेशा अस्पष्ट रही है। वास्तव में जो नई वात है वह यह है कि दोनों धाराएँ एक हद तक साथ–साथ चलती हुई आगे चलकर एक हो जाती हैं। इसलिए परस्पर विरोधी विचारधाराओंवाले धार्मिक समुदायों को 'उचित' प्रतिनिधित्व देने के लिए धर्मनिरपेक्षता अपरिहार्य हो गई है। अतः यह कहा जा सकता है कि विभिन्न धार्मिक समुदायों के 'असली' प्रतिनिधि उनके कट्टरपंथी नेता हैं न कि उनके सुधारक। वैसे भी चुनावी राजनीतिक आधार तैयार करने के लिए तथा राज्य से मान्यता प्राप्त करने के लिए लोगों को सांप्रदायिक आधार पर सहमत करना एक असरदार राजनीतिक औजार बन गया है। मध्यमार्गी जनता पार्टी के दो राजनीतिज्ञों–सैयद शहाबुद्दीन तथा कल्याण सिंह कालवी के इतिहास पर नजर डाली जाए तो पता चलता है कि किस प्रकार राजनीति के मुख्यधारा संप्रदायीकरण के लिए स्त्री को 'प्रतीक' के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। उल्लेखनीय है कि इन दोनों नेताओं की राजनीति औरतों के मुद्दों के माध्यम से चमकी तथा इन्हें कट्टरपंथी सांप्रदायिक नेता के रूप में महत्त्व मिला। सैयद शहाबुद्दीन को जहाँ मुस्लिम महिला विधेयक पर हुए संघर्ष के कारण ख्याति मिली वहीं कालवी सती समर्थक आंदोलन चलाने के कारण लोकप्रिय हुए। शहाबुद्दीन आजकल अपनी निजी राजनीतिक पार्टी के मुखिया हैं जबकि श्री कालवी जनता दल के चुने हुए प्रतिनिधि हैं।

प्रतिनिधित्व, राजनीति तथा राज्य के प्रश्न सन् 1987–88 में नारीवादियों के समक्ष नए रूप में उभरे। धार्मिक कट्टरवादिता, जिसे हम दुनियाभर में पाते हैं, न केवल स्त्रियों के उत्पीड़न को नियमित करती है, बल्कि स्त्रियों को उनके खुद के उत्पीड़न के प्रति भी प्रोत्साहित करती है। स्त्री–समर्थक आंदोलन ने बड़ी संख्या में स्त्रियों को जातिवादी (राजपूत) तथा धार्मिक (हिंदू) आधार पर सहमत होने के लिए तैयार कर लिया। कहने का तात्पर्य यह कि उन्होंने उन स्त्रियों को राजी किया जो उनकी माँगों से प्रत्यक्षतः प्रभावित होती दिखाई पड़ीं। इससे उन्हें यह दावा करने में सुविधा हुई कि वे ही हिंदू स्त्रियों की 'वास्तविक' इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। इसके साथ ही उन्होंने नारीवादियों पर हिंदू स्त्रियों की इच्छाओं का असली प्रतिनिधि न होने का आरोप भी लगाया। इससे नारीवादियों की स्थिति बड़ी विचित्र हो गई। वे ऐसी स्त्रियों के हितों की वकालत करती नज़र आईं जिनकी कि वे प्रतिनिधि ही नहीं हैं और जो अपने हितों को भिन्न रूप में परिभाषित करती हैं।

इस संदर्भ में परंपरा बनाम आधुनिकता की दलीलें इस रूप में दी जाने लगीं जैसे इनके माध्यम से नारीवादियों को अलग–थलग करना हो। आधुनिकता की पृष्ठभूमि इतनी सफलता से तैयार की गई कि नारीवादियों की इस दलील के बावजूद कि सती का उपयोग 'परंपरा' के निर्माण के लिए किया जा रहा है, उनके तर्कों को ठुकरा दिया गया। परंपरा को ऐसे ऐतिहासिक तथा आत्माधिकारिक रूप में परिभाषित किया गया कि उसने इस तथ्य को निगल लिया कि प्रचार के आधुनिक तौर–तरीकों, आधुनिक दलीलों तथा आधुनिक दृष्टिकोण से सती को जाति तथा सांप्रदायिक पहचान की वहाली के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है। यानी सती का प्रयोग मतदाता समूहों के सुधार एवं राज्य के अंतर्गत जाति एवं सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व के लिए किया जा रहा है।

सबसे बुरी बात यह थी कि स्त्रियों का शहरी–ग्रामीण एवं परम्परावादी–आधुनिक के मध्य ध्रुवीकरण हो जाने से प्रश्नों एवं अंतर्दृष्टि की सारी श्रृंखला ही ठुकरा दी गई। मिसाल के तौर पर, सती आंदोलन के प्रति स्त्रियों के समर्थन पर नजदीकी से निगाह डालें तो स्पष्ट होता है कि इसका मापदंड दोहरा है, यानी कई मायनों में यह सती की पूजा के प्रति आकर्षित दिखाई पड़ता है और कई मायनों में सती की वास्तविक प्रथा के प्रति।

दूसरे, सती–समर्थक प्रदर्शन के लिए रजामंद की गई स्त्रियों से जब उनकी राय पूछी गई तो उन्होंने स्पष्ट किया कि वे इस मुद्दे से प्रत्यक्षतः प्रभावित नहीं हैं। उनकी विधवा की छवि स्पष्टतया गौण रही। वैधव्य के संदर्भ में सती को स्त्री–पुरुष के विचारधारात्मक संबंधों की परंपरा में सती को जिस प्रकार गौरवान्वित किया गया उससे न केवल हिंदू विधवाओं की वास्तविक अभावग्रस्त जीवन स्थितियाँ प्रच्छन्न हो गईं बल्कि इससे उनकी गुलामी का मार्ग प्रशस्त हो गया क्योंकि यदि विधवा स्त्री सती के आदर्शों के अनुसार स्वयं को जलाने के लिए तैयार न हो तो इससे अच्छा उसका भाग्य और क्या होगा कि या तो वह अपने परिवार की नौकरानी बनकर जिए या फिर मंदिर की ?

नारीवादियों को यह देखकर गहरा आघात लगा कि किस प्रकार परंपरा एवं आधुनिकता, भौतिकतावाद एवं अध्यात्मवाद, ग्रामीण तथा शहरी के मध्य हुए स्त्रियों के ध्रुवीकरण ने स्त्रियों के प्रति स्नेह एवं करुणा के सभी प्रश्नों को दरकिनार कर दिया। इससे भी बुरा, शायद बीमार वह तरीका था जिसने इन ध्रुवीकरणों के दबाव में उन्हें उस स्थिति में ला खड़ा किया जिसका वे पहले विरोध कर चुकी थीं। ऐसी ही एक स्थिति थी तीन प्रकार से की गई। सरकार के हस्तक्षेप की माँग–प्रथम, यह कि रूपकँवर के सास–ससुर तथा जिस डॉक्टर ने उसे नशे का इंजेक्श लगाया, पर हत्या का आरोप लगाया जाए; दूसरा, वे सभी लोग, जिन्हें रूपकँवर की मौत से राजनीतिक या आर्थिक लाभ पहुँचा, दंडित किए जाएँ तथा तीसरे, धर्म के नाम पर स्त्रियों के प्रति होनेवाले अपराधों के महिमामंडन पर प्रतिबंध लगाते हुए नया कानून बनाया जाए।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- II, Issues-40, YEAR- April-June 2026

इस प्रकार की माँगों, विशेषतया राज्य से अपनी माँगों के संदर्भ में, नारीवादियों का उतावलापन समकालीन नारीवादी आंदोलन के प्रारंभ से ही रहा है और वस्तुतः उनके सभी अभियानों में यह उतावलापन उनकी ऊर्जा का शाश्वत स्रोत रहा है। शायद इसी उतावलेपन के कारण दिल्ली की सती के विरुद्ध स्थापित संयुक्त कार्रवाई समिति की उपसमिति द्वारा तैयार किए गए विधेयक के प्रारूप को न तो कमी संसद के पटल पर रखा गया और न ही उसे सांसदों में वितरित किया गया। इसके बजाय सरकार को अपना विधेयक (जो कि वह विपक्ष के हंगामे को देखते हुए) लाई, जिसमें सती को आत्महत्या के रूप में परिभाषित किया गया था और इस आत्महत्या की कोशिश करनेवाले जिस पहले व्यक्ति को दंडित किया जाना था वह स्त्री स्वयं थी।

हममें से अधिसंख्य ने सती के विरुद्ध चलाए गए अभियान में नारीवाद के विरोध को शक्तिशाली रूप में उभरते देखा जिससे आंदोलन को गहरा धक्का लगा। फिर भी हमारी परिभाषाओं के प्रति उसने जो चुनौतियाँ हमारे सामने प्रस्तुत कीं उससे हमें मूल्यवान आत्मावलोकन का अवसर मिला विभिन्न गुट तथा समुदाय जिस रूप में स्वयं को देखते हैं उसे समझने की बड़ी और मिश्रित समझ पैदा करना' यह कि शुद्ध विरोधी नजरिए से राज्य को सत्ता का बुत मानना वह भी विशेषतया विपत्ति के क्षणों में, सहायक नहीं है क्योंकि हमारे लिए यह कहना महत्त्वपूर्ण है कि हमारे सामाजिक प्रशासन में अपनी आवाज बुलंद करने का हमें भी अधिकार है। तीसरे, प्रतिनिधित्व का अर्थ मात्र संख्या का प्रदर्शन करना नहीं बल्कि अपनी आवाज में आवाज मिलाने के लिए प्रचुर मात्रा में स्त्रियों को प्रोत्साहित करना है जो किसी हद तक नारीवादी तथा अन्य संबद्ध आंदोलनों में परिलक्षित होना प्रारंभ हुआ है। उदाहरणार्थ, सती का विरोध अनेक स्रोतों से पैदा हुआ दक्षिणपंथी हिंदू सुधारवादी परंपरा तथा स्वामी अग्निवेश जैसे एकाकी वामपंथी हिंदू सुधारकों दोनों ने इसका विरोध किया। तथ्य यह है कि स्वामी अग्निवेश ने देवराला जाकर धरना दिया तथा बनारस एवं पुरी मंदिरों के मुख्य पुजारियों को चुनौती दी कि वे सती को शास्त्रसम्मत 'मान्यता' के मुद्दे पर उनके साथ शास्त्रार्थ करें। उनकी चुनौती ठुकरा दी गई। कुछ गांधीवादी गुटों ने भी इसका विरोध किया। उन्होंने उड़ीसा में लगभग 10,000 लोगों की एक रैली निकाली तथा पुरी मंदिर के मुख्य पुजारी का घेराव करके उनके दृष्टिकोण पर हिसाव देने को कहा परंतु पुजारी ने कोई जवाब नहीं दिया। महाराष्ट्र के जाति–विरोधी आंदोलन ने भी सती के विरोध की घोषणा की। अंततः राजस्थान में भी ग्रामीण स्त्रियों ने बड़ी संख्या में रूपकँवर की मृत्यु का महिमामंडन करने, उसकी मौत पर सरकारी निष्क्रियता तथा सती के विरोध में प्रदर्शन किया।

इनमें से अधिसंख्य कार्रवाइयाँ उस समय समन्वित नहीं थीं क्योंकि नारीवादियों के साधन समन्वय की अनुमति नहीं देते थे। एक प्रकार से समन्वय सचमुच जरूरी भी नहीं था क्योंकि स्त्रियों की अन्य समस्याओं की भाँति सती की समस्या सिर्फ अभियान चलाकर हल नहीं की जा सकती थी। इस संदर्भ में शायद सबसे मूल्यवान आत्मावलोकन था वह सूझबूझ पैदा करना जिसके तहत प्रतिक्रिया दर्ज कराने के उद्देश्य से विशिष्ट अल्पकालिक अभियान जरूरी थे। नारीवाद की जड़ें अब पूरे देश में अनेक प्रकार से फैल रही हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. राधा कुमारः स्त्री संघर्ष का इतिहास, वाणी प्रकाशन, 2019, नन्दिता हक्सर तथा शीवा छाछी द्वारा दिसंबर, 1983 में किया गया उल्लेख।
2. इंडियन एक्सप्रेस, 10.5.1987.
3. हिंदुस्तान टाइम्स, 6.3.1985.
4. स्टेट्समैन, 18–20.9.1987.
5. टाइम्स ऑफ इंडिया, 17.9.1987.
6. तथैव।
7. कुमकुम संघारी का सेमिनार, सं. 342, फरवरी, 1988 में प्रकाशित लेख 'परपेट्रेटिंग द मिथ'।
8. सुदेश वैद, 'पॉलिटिक्स ऑफ विडो इमोलेशन', सेमिनार, फरवरी 1988.
9. हिंदुस्तान टाइम्स, 17.9.1987.
10. मानुषी सं. 42–3, 1987 में मधु किश्वर तथा रुथ वनीता का लेख 'रूपकँवर का जलाया जाना।'
11. टाइम्स ऑफ इंडिया 17.9.1987.

*****